॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे ब्रह्म! मैं तेरी शरण में आया हूँ और जहाँ भी मैं जाता हूँ वहाँ तुझे ही दृष्टिपात करता हूँ। प्राची दिक् में, पूर्व में अग्नि का प्रावधान हो रहा है और दक्षिण में इन्द्र बन करके रहते हो और प्रतीची दिक् में वरुण बन करके रहते हो, उदीची दिक् में सोम बन करके रहते हो, ज्ञान के भण्डार हो, ध्रुवा में पालन करने वाले विष्णु हो और ऊर्ध्वा में पालन करने वाला बृहस्पति कहलाता है। वह प्रभु! की उपासना करता है– प्रातः काल कहता है कि प्रभु पाप करने के लिए कहाँ जाऊँ और मेरे द्वारा पाप क्यों हों? हे प्रभु! मुझे इतनी शक्ति प्रदान करो कि मैं पूर्व में अग्नि के तुल्य तेज को दृष्टिपात करता रहूँ, मैं दक्षिण में इन्द्र को दृष्टिपात करता रहूँ। और अन्न का जो भण्डार है जो मानव को वृत्त बनाता है। हे प्रभु! प्रतीची में तुम वरुण बन करके रहते हो और वह वरुण ही मेरे जीवन की सार्थकता है, इसी प्रकार उदीची में सोम बन करके रहते हों। सोम किसे कहते हैं? ज्ञान को सोम कहते हैं, विज्ञान को सोम कहते हैं। विवेक को सोम कहते हैं, वह धारण होने वाला सोम है। योगीजन इसी सोम को पान करते हुए ज्ञान और विवेक से सने हुए अमृत को प्राप्त करते हैं तो उनकी वाणी में सोमपन आ जाता है। प्रभु! आप ध्रुवा में पालन करने वाले विष्णु बन करके रहते हो, आज हम सबकी पालना करने वाले हो और ऊर्ध्वा में प्रभु! आप बृहस्पति बन करके मेरे जीवन के रक्षक बनते हो, क्योंकि रक्षा विद्या और विवेक से होती है। ज्ञानी ही संसार में महान् कहलाता है और उसका नेतृत्व करने वाला बृहस्पति कहलाता है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 577 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 652
वर्ष : 49 44 समग्र वर्ष : 55

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1. प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2. अनुक्रम		4
3. पवित्र गृह निर्माण	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-19
4. भगवान् कृष्ण द्वारा नाग मन्थन	पूज्यपाद-गुरुदेव	20-34
5. महर्षि सोमकेतु कौटल्य और राजा सगर का दान पर सम्वाद	पूज्यपाद-गुरुदेव	35-37
6. ऋषियों के उद्‌गार		38
7. दान, पुस्तकों की सूची व पुस्तक प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		39-42

चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (पूर्व शृङ्गी ऋषि जी) के शुभ आशीर्वाद से प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग का आयोजन लाक्षागृह बरनावा में श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय के प्रांगण में दिनाँक 14 मार्च, 2021 से 21 मार्च, 2021 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित किया जा रहा है जिसमें आप सब अपने सम्बन्धियों व मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.)

॥ ओ३म् ॥

पवित्र गृह निर्माण

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद वाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं, और वे महान् और पवित्र कहलाते हैं और वह विज्ञानवेत्ता हैं। और विज्ञानमय अपने प्रायः अपनी आभा में रत्त रहते हैं। वे गृह-स्वामी हैं। क्योंकि इस संसार रूपी गृह का जिसने निर्माण किया और ये संसार हमें एक अद्वितीय रूप में दृष्टिपात आता रहता है। आज का हमारा वेद मन्त्र हमें कुछ प्रेरित कर रहा है और ये प्रेरणा दे रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की महती और उसका जो गृह है मानो उसमें हम सदैव रत्त रहें। क्योंकि ये जो ब्रह्माण्ड है, ये परमपिता परमात्मा का गृह है, आयतन है, और ये उसी में वास कर रहा है। इसी प्रकार प्रत्येक प्राणी मात्र अपने गृहों में वास करते रहते हैं। और वे परमपिता परमात्मा के गर्भस्थल में अथवा उसकी आभा में वो सदैव रत्त रहते हैं।

आत्मा का गृह

इसीलिए हमारा वेद मन्त्र हमें ये प्रेरित कर रहा है। हमें ये उद्गीत गाने के लिए बाध्य कर रहा है कि हम मानो अपने गृहों के ऊपर विचार-विनिमय करते रहें। क्योंकि हमारा जो ये मानवीय गृह है जिसमें ये अन्तरात्मा विद्यमान रहता है। ये आत्मा का गृह क्या है **"पञ्चम् भूतम्**

ब्रह्माः'' एक समय बेटा! महात्मा जालवी से ये प्रश्न किया गया कि हमारा आत्मा का लोक क्या है। तो मुनिवरो! देखो, महर्षि जालवी ने ये कहा कि हमारा जो लोक है, आत्मा का जो लोक है वो पञ्चमहाभूत माना गया है। ये पञ्चमहाभूतों का गृह कहलाता है जिसमें मुनिवरो! देखो, **दस प्राण** हैं। मानो **एक ही गति के दस भाग दस रूपों में वर्णित होते रहे हैं।** और मुनिवरो! देखो, वह ''अमृताम् ब्रह्मणेः'' और पञ्च महावृत्तियाँ कहलाते हैं, जिनको हम ज्ञानेन्द्रियाँ कहते हैं। और पाँच कमेन्द्रियाँ कहलाती हैं। मेरे प्यारे! देखो, मन, बुद्धि, चित्त और अहङ्कार वे प्रकृति के सूक्ष्म स्वरूप माने गए हैं। तो मानो ये आत्मा का गृह माना गया है। जिस गृह में आत्मा वास करता है। और ये पञ्चमहाभूतों में रत्त रहने वाला है। तो विचार आता रहता है, वेद का मन्त्र क्या कहता है। कहता है **''गृहीयाम् गृहे वर्णम् ब्रह्माः आत्माः''**। हे आत्मा! तेरा ये गृह है और जिस गृह में तू वास कर रहा है उसको जानने का प्रयास कर। मेरे प्यारे! देखो, ये आत्मा जिसमें पञ्चमहाभौतिक रूपों में रमण करने वाला ये आत्मा का लोक कहलाता है। जैसे कन्या का लोक देवलोक है, पितर लोक है, और देखो कुलेभ्यों में पति लोक कहलाता है। इसी प्रकार हमारा जो ये आत्मा का लोक है ये पञ्चमहाभूत भौतिक शरीर कहलाता है।

मानव की मनोकामना

बेटा! देखो, इसके ऊपर हम विचार-विनिमय करते चले जाएँ। जैसे मानो हमारा उस परमपिता परमात्मा ने हमारे मानो शरीरों का निर्माण किया है और मानो इस गृह का निर्माण किया। मानो देखो, उस परमपिता परमात्मा ने किया है और वह माता के गर्भस्थल में, माता के गृहताम् में मानो देखो, उसका निर्माण होता रहा है। इसी प्रकार बाह्य जगत में जब ये आत्मा इस पञ्च लोक, पञ्चमहाभूतों वाले मानो देखो, गृह में प्रवेश करता हुआ जब ये बाह्य जगत में जाता है तो शरीर की रक्षा के लिए, मुनिवरो! देखो, एक मानव, मुनिवरो! देखो, इस पञ्च महाभूतों की, इसका विशाल

रूप ले करके, स्थूल रूप ले करके बेटा! इसके गृह का और एक निर्माण करता है। वह गृहस्वामी है अथवा गृहस्वामिनी है। और वह यह चाहते हैं कि हमारा जो गृह है, वह मानो देखो, ''एकन्तन धनम् ब्रह्मेः'' जिससे हम पञ्च महाभूतों में रमण कर सकें। और हम मानो देखो, उस तमोगुणी रूप में रत्त हो करके हम उत्पत्ति के मूल में पहुँच जाएँ। ऐसी उनकी मनोकामना रहती है, ऐसी मानो भावना के साथ ही मानव एक निर्माण करता है।

मेरे प्यारे! देखो, ये गृह **''वर्णम् ब्रह्माः वरुणस्सम् भवे देवत्वाम् लोकाम्''**। तो वेद का मन्त्र ये कहता है क्या हे गृह स्वामी! हे गृहस्वामिनी! तू अपने गृह में जैसे तू निर्माण करता है वह भी परमपिता परमात्मा का दिया हुआ स्थूल जगत है, जैसे सूक्ष्म जगत मानो प्राण और इन्द्रियों में आत्मा के शरीर का निर्माण होता है। इसी प्रकार बाह्य जगत में जो पञ्चमहाभूतों का स्थूल रूप है। जैसे जड़ रूप है, जैसे मानो गुरुत्व रूप है, और जिस प्रकार मुनिवरो! देखो, अग्नि का व्रत कहलाया जाता है, और उसी में गति है जो मुनिवरो! देखो, अन्तरिक्ष जो ऊर्ध्वागति को गृह रमण कराते रहते हैं। वह गृहस्वामी तो परमात्मा के अमूल्य जगत में, मानो माता वसुन्धरा के गर्भ में विद्यमान हो करके तू ऊर्ध्वा-ऊर्ध्वा गृहों का निर्माण करता है और निर्माण में तेरी भावना ये रहती है क्या मैं संसार, इस शरीर की, आत्मा के शरीर की मैं रक्षा कर सकूँ। **आत्मा का शरीर, ये मानव शरीर कहलाता है।** मेरे पुत्रो! देखो, वह भी एकन्त स्थली में विद्यमान हो करके, याग में याज्ञिक मानो अपने में प्रवेश करता रहता है।

महर्षि भृङ्गी ऋषि महाराज की आकांक्षा

आओ मेरे प्यारे! इस सन्दर्भ में मैं तुम्हें एक सतोयुग के काल में ले जाना चाहता हूँ बेटा! देखो, सतोयुग के काल में महर्षि भृङ्गी ऋषि पैदा, मानो भृङ्गी ऋषि हुए हैं और वह भृङ्गी ऋषि बड़े उद्गीत गाने वाले, वेदों के मन्त्रों का उद्घोष करने वाले और सूक्ष्म शरीर और कारण शरीरों के आत्मा के शरीरों को जानने वाले थे अथवा उन गृहों को जानने वाले थे। मेरे प्यारे!

देखो, वेद मन्त्रों में अध्ययन करते रहे, क्या एक पुत्रयाग भी होता है। मैं पुत्रयाग में रमण करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि जहाँ नाना प्रकार के वेद मन्त्रों के अध्ययन में, नाना प्रकार के यागों की वो चर्चा करता रहा। जैसे अग्निष्टोम याग, जैसे वाजपेयी याग, रुद्र याग, विष्णु याग जिसकी चर्चाएँ हम इससे पूर्व काल में भी कर आए हैं। तो महर्षि भृङ्गी ऋषि, मुनिवरो! देखो, वेद मन्त्रों में इस प्रकार का अध्ययन करते रहते थे। जब अध्ययन करते रहे तो एक समय मानो ऋषि के हृदय में ये आकांक्षा जाग्रत हुयी कि हमें पुत्र याग करना चाहिए।

मेरे प्यारे! देखो, पुत्र याग के लिए उन्होंने अपने आसन को त्याग दिया, तपस्वी ने और वेद के मर्म को जानने वाला ऋषि बेटा! वहाँ से प्रस्थान करता है। वह जो मानो देखो, वह राजा, वेतु नाम का राजा, बेटा! देखो, वह राज्य अयोध्या में कर रहा था। मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि भ्रमण करते हुए वह राजा के समीप पहुँचे। राजा ने अपने आसन को त्याग दिया और राजा ने आसन को त्याग करके कहा, आइए भगवन्! पधारिए। वह उस स्थली पर विद्यमान हो गए। मेरे पुत्रो! देखो, जब राजस्थली पर विद्यमान हो गए तो राजा ने कहा, कहो भगवन्! आज कैसे आगमन हुआ है? उन्होंने कहा, हे प्रभु! मेरा जो आगमन हुआ है राजन्! इसलिए कि मैं वेदों का अध्ययन कर रहा हूँ और वेदों का अध्ययन करते-करते उसमें पुत्र याग का वर्णन आया है। और मुझे पुत्र याग करना है, क्योंकि नाना प्रकार के जहाँ यागों का वर्णन आता रहता है वहाँ पुत्र यागों का भी वर्णन आता रहता है। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा, हे भगवन्! अमृताम् ब्रह्मणेः, तुम मुझे अपने कन्या को प्रदान करो। जिससे मैं पुत्र याग कर सकूँ। मेरे प्यारे! देखो, राजा ने कहा, भगवन्! बहुत प्रियतम्।

महाराजा वेतु की कन्या का सौभाग्य

उन्होंने बेटा! गृह में प्रवेश हुए, और राजा ने अपनी दिव्या, अपनी पत्नी को और पुत्री को एकाग्र करते हुए उन्होंने कहा, हे पुत्री! देखो ऋषि

भृङ्गी पधारे हैं और भृङ्गी ऋषि वेद के तपस्या के आभा में रत्त रहते हैं और वेद के मर्म को जानते हैं, जो सदैव प्रकाश में रहते हैं। मेरा राष्ट्र ऐसे महापुरुषों से सुशोभित हो रहा है। हे पुत्री! वह पुत्र याग करने के लिए मानो तुम्हें अपना साथी बनाना चाहते हैं। तो उस समय मुनिवरो! देखो, उनकी देवकन्या ने कहा, हे प्रभु! जैसे हे पितर! आपकी आज्ञा हो, वैसा कीजिए। ये तो मेरा बड़ा सौभाग्य है कि जो एक मैं महापुरुष के, एक तपस्वी के साथ में अपने जीवन को व्यतीत करूँ। मेरे प्यारे! देखो, वह उन्होंने स्वीकार कर लिया और राजा ने अपनी राजस्थली में आ करके राजा ने ऋषि से कहा हे ब्रह्मर्षि! मानो मेरी कन्या आपको स्वीकार कर रही है। उन्होंने कहा, बहुत प्रियतम्। बेटा! दोनों ने वहाँ से गमन कराया और वह राजकन्या मानो देखो, वह देवी उन्हें प्रदान कर दी।

महर्षि भृङ्गी ऋषि व उनकी देवी का तप

मेरे पुत्रो! वह भयङ्कर वनों में जा करके निर्जल मानो देखो, वहाँ परमपिता परमात्मा के नामोकरण का उद्घोष होता रहता था। जहाँ कोई प्राणी नहीं, मुनिवरो! देखो, पक्षीगण अपने में चयन कर रहे थे। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि और वह कन्या, मुनिवरो! देखो, तपस्या करने लगे और तपस्या में मानो वेद के मन्त्रों में उनकी विवेचना में और तपस्या में इतने तल्लीन हो गए कि एक-दूसरे को ये, उन्हें भान नहीं रहा कि हम दो हैं या एक है। मेरे प्यारे! बारह वर्ष उन्हें व्यतीत हो गए और बारह वर्ष के पश्चात्, ऋषि को पुनः से वो पुत्रेष्टि याग का प्रसङ्ग, पुत्र याग का प्रसङ्ग उनके समीप वेद मन्त्रों में पुनः आया। वह देवी के समीप पहुँचे। और देवी से कहा, हे देवी! हम पुत्र याग करना चाहते हैं उन्होंने कहा, हे प्रभु! आप मानो, आप तो वेद के मर्म को जानने वाले हैं। मैं तो आपकी शरण में रहती हूँ प्रभु! मैं भी तपस्या के कुछ अर्थों को जान गयी हूँ। बारह वर्ष हो गए हैं तपस्या करते हुए और पत्र और पुष्पों को पान करते हुए, उसमें अपने जीवन को व्यतीत कर रही हूँ। ये जीवन मुझे बहुत प्रिय लग रहा है।

यदि आपकी ये इच्छा है कि पुत्रेष्टि याग करना है, पुत्र याग करना है तो प्रभु ये तो मानो वायुमण्डल है और वायु मण्डल में पक्षीगण भी भ्रमण करते रहते हैं और देवता भी निर्जल हो करके हमें दृष्टिपात करेंगे। हे भगवन्! सुशोभनीय नहीं है। हे प्रभु! इसके लिए शृङ्गार चाहिए, गृह चाहिए और गृह में सब सुविधा होनी चाहिए। मेरे प्यारे! भृङ्गी ऋषि ने कहा, हे देवी! मैं ऐसा ही कर पाऊँगा।

गृह प्रवेश

बेटा! उन्होंने अपने आसन को त्याग करके और भयङ्कर वन में, वह वन से बेटा! गमन करते हुए राजा के समीप पहुँचे। और राजा ने बेटा! नत-मस्तिष्क हुए चरणों की वन्दना की और ये कहा, कहो भगवन्! आज कैसे आगमन। ऋषि ने कहा, हे प्रभु! हे राजन्! मैं इसलिए आ पाया हूँ क्या मैं मानो देखो, पुत्र याग करना चाहता हूँ। मेरे लिए एक गृह चाहिए, एक भव्य भवन चाहिए और उसमें सुविधा चाहिए। उन्होंने कहा, बहुत प्रियतम्। मेरे प्यारे! एक मानो देखो, नग, देखो तालाब के तट पर, जलाशय के तट पर उन्होंने बेटा! उनका एक गृह का निर्माण किया और गृह का निर्माण करके मानो देखो, उसमें सब सुविधाएँ प्रदान कीं और प्रदान करके मुनिवरो! देखो, ऋषि को समर्पित कर दिया।

महर्षि अगस्त्य मुनि महाराज का जन्म

ऋषि ने भ्रमण करते हुए वह भयङ्कर वन में पहुँचे। और भयङ्कर वनों में जा करके देवी से कहा, हे देवी! देखो, हमारे गृह का निर्माण हो गया है। अब हमें पुत्र याग करना है। देवी ने कहा, बहुत प्रियतम्! मेरे प्यारे! वे भव्य भवन में चले गए। जहाँ सब सुविधा विद्यमान है। मेरे पुत्रो! देखो, उसमें वास करने लगे। मुनिवरो! देखो, दिव्या से एक सन्तान का, एक पुत्र का जन्म हुआ और पुत्र का जन्म होते ही जब वह देखो कुछ बाल्य आवृत्तियों में रत्त हो गया। तो उन्होंने कहा देवी! हमारी इच्छा पूर्ण हो गयी है और

अब मानो पुत्र यागी बन गए हैं। हे भगवन्! देखो आत् ब्रह्मेः, हे देवी! हमे इस गृह को त्याग देना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा, बहुत प्रियतम्। मुझे बेटा! ऐसा स्मरण आ रहा है। मेरे प्यारे! देखो, वह भयङ्कर वनों में देखो दोनों तपस्या में तल्लीन हो गए और वह तपस्या करने लगे। बाल्य को दोनों तपस्या की युक्तियों का वर्णन कराते रहते और वेद का अध्ययन कराती रही माता। माता क्योंकि माता तो दिव्य है।

गृह निर्माण की पराकाष्ठा

ये जो गृह के निर्माण होते हैं, इनमें एक ही विशेषता होती है क्या माता एकन्त स्थली में विद्यमान हो करके अपने पुत्र और पुत्रियों को वह मुनिवरो! देखो, वेदज्ञ बनाने के लिए तत्पर है और तपस्या में बाल्यों को परणित कराती रहे जिससे गृह स्वर्ग बन जाएँ। **गृह के निर्माण का अभिप्रायः ये कि यह गृह स्वर्ग होना चाहिए।** और स्वर्ग उस काल में बनता है जब एक-दूसरे की सम्मति से ये प्राणी उसमें वास करता है। मानो देखो, पति ने कहा, पत्नी ने कहा, दोनों की सम्मति हो गयी। पुत्र से कहा, पुत्रियों से कहा, तो वह एक सम्मति हो गयी और उस सम्मति के पश्चात् देखो उसकी तरङ्गें उत्पन्न होती हैं, उसका नाम स्वर्ग कहा जाता है। मेरे प्यारे! देखो, वेद का ऋषि कहता है। वेद का मन्त्र कहता है। हे गृहस्वामिनी! हे गृहस्वामी! तुझे अपने गृह को मानो स्वर्ग बनाना है। तो स्वर्ग उस काल में बनेगा जब मानो एक-दूसरा एक-दूसरे की सम्मति में रहेगा।

मुनिवरो! देखो, ऋषि भृङ्गी ने अपनी सन्तान को बेटा! देखो, ब्रह्म ऋषि बनाया। क्योंकि वह भी ब्रह्मवेत्ता थे और उनकी दिव्या भी ब्रह्मवेत्ता बन गयी उनके सम्पर्क में। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार केवल ये क्या हमारा जो गृह है। मुनिवरो! जो आत्मा का जो शरीर का गृह है आत्मा का गृह तो ये शरीर है। पञ्चमहाभूतों वाला शरीर है और मुनिवरो! देखो, ये जो बाह्य जगत में शरीर की रक्षा करने वाला जो गृह है वह भी परमपिता परमात्मा

की स्थूल जगत को ले करके इसका निर्माण किया है। क्योंकि इसमें मुनिवरो! देखो, जल है, पृथ्वी के परमाणु हैं, पृथ्वी की स्थूलता है और जल की स्थिरता है और मुनिवरो! देखो, अग्नि की स्थूलता प्रवेश हो करके मुनिवरों! देखो, गृह का निर्माण होता है और उस गृह में वायु गमन कर रहा है। उसी गृह में आकाश तत्त्व का निर्माण किया जिससे हम उससे भ्रमण कर सके। तो मेरे प्यारे! देखो, ये स्थूल जगत कहलाता है। हे मानव! तू स्थूल जगत में वास करता हुआ अपने गृह को स्वर्ग आश्रम बना। जिससे मानो देखो, स्वर्ग में तेरे हृदय की तरङ्गें ओत-प्रोत हो जाएँ।

महर्षि भृङ्गी ऋषि और उनकी दिव्या के उद्‌गार

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है महर्षि भृङ्गी ऋषि और उनकी दिव्या जब मानो तपस्या करते थे तो बाल्य-बालिका भी मानो तपस्या में तल्लीन रहते। एक समय भृङ्गी ऋषि महाराज ने देवी से कहा, हे देवी! तुम्हें इतना समय हो गया है। देखो मेरे प्रश्न का तुम उत्तर दो। उन्होंने कहा, भगवन्! आप मेरे से प्रश्न करना चाहते हो। आप तो महान् तपस्वी हैं और मैं आपकी शरण में रहती हूँ। उन्होंने कहा, नहीं कुछ सूक्ष्म-सा विचार है। उन्होंने कहा तो उद्‌गीत गाइए। उन्होंने कहा, देवी! **तपस्या किसे कहते हैं।** देवी ने कहा, प्रभु! आपके मुखारबिन्दु से और आपको दृष्टिपात करके और पूज्य पिताजी के गृह में मैंने ये पाया है। आचार्यों से भी पाया है क्या **स्वर्ग उसे कहते हैं, जहाँ मानव की तरङ्गें मानो देखो, सत्य में परणित होने वाले गृह को ऊँचा बनाती हैं।** मेरे प्यारे! उन्होंने कहा, सत्य है, ऋषि ने कहा, हे दिव्या! मैं जानना चाहता हूँ, ये तपस्या क्या है। उन्होंने कहा, इन्द्रियों के विषयों को जान करके, इन्द्रियों के विषयों को जान करके और वह जब एकोकीकरण बन करके उसका साकल्य बना लेता है और उसका साकल्य जब हृदयरूपी यज्ञशाला में उसे प्रवेश कर देता है तो ज्ञान की उपलब्धि हो जाती है। अन्धकार नष्ट हो जाता है, अज्ञान नष्ट हो जाता है तो **ज्ञान का नाम ही प्रकाश कहा गया है।** और उसी का नाम

मानो देखो, तपस्या कहा है। मेरे पुत्रो! ऋषि बड़े प्रसन्न हुए। भृङ्गी ऋषि बोले, हे देवी! हे दिव्या! मैं जानना चाहता हूँ ये तप क्या है? मेरे प्यारे! देखो, ऋषि, देवी ने कहा, हे प्रभु! मेरे विचार में तो ये आता है। क्या **मानव अग्नि के समीप रहता हुआ, अग्नि उसे स्पर्श न कर पाए।** मानो देखो, वही तपस्या है—देखो पञ्चमहाभूतों की अग्नियाँ, अग्नियाँ उनकी जिव्हा में प्रवेश हो रही हैं और उनमें वो स्पर्श करता है, तो उसी का नाम तपस्या है। उन्होंने कहा, हे दिव्या! इसको मानो स्पष्टीकरण करें इसका। उन्होंने कहा, हे प्रभु! विचार आता है कि उनमें ब्रह्मणेः व्रतम्, वह जो विषय है उन विषयों को विषय में ही बरतने वाला और उन विषयों को बरत करके मानो देखो, प्रकाश में वरणित हो जाता है वही मानो, तपस्या कही जाती है। उन्होंने कहा यथार्थतम्।

जब चतुर्थ वाक्यों में कहा कि ये तपस्या क्या है। उन्होंने कहा, दिव्या, ये तपस्या क्या है। उन्होंने कहा, तपस्या उसे कहते हैं जो हम इस संसार में रहते हुए और संसार से मानो विरक्त हो जाएँ और संसार में हम देखो आस्था में देखो उसमें मोह-ममता में न रह करके और वह अपने कर्त्तव्य का पालन कर जाएँ तो मानो देखो, वही तपस्या कहलाती है।

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा, हे दिव्या! मैं जानना चाहता हूँ ये **कर्त्तव्य क्या है** जिस कर्त्तव्य की तुमने वार्त्ता प्रगट की है। उन्होंने कहा, हे प्रभु! देखो, जो भी क्रियाकलाप संसार में हो रहा है—चाहे वह गृह में हो रहा है, चाहे वह बाह्य जगत में हो रहा है, चाहे वह परमात्मा के जगत में हो रहा है, चाहे अपने मनोनीत हृदय में हो रहा है। मानो देखो, **जो भी इस प्रकार से भावना के क्रियाकलाप करता है कि ये मेरा कर्त्तव्य है। मैं, इसलिए मेरा जन्म हुआ है और वह कर्त्तव्य की वेदी पर निहित हो जाता है** तो उसी का नाम कर्त्तव्यवाद कहा जाता है। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा, हे देवी! मैं जानना चाहता हूँ, ये कर्त्तव्यवाद क्या है उन्होंने कहा, भगवन्! कर्त्तव्यवाद उसे कहते हैं जो आत्मा में जिन तरङ्गों का प्रादुर्भाव होता है, आत्मा में

जिसका प्राणोव्रत उत्पन्न होता है। तो मानो देखो, **आत्माम् भूतम् ब्रह्मणाः आत्माम् भवे क्रतम्।** हे देवी! अमृताम्, हे दिव्या! हे पितर ब्रहे! हे ऋषिवर! मानो **देखो, वही कर्त्तव्यवाद है जो आत्मा की प्रेरणा को जो स्वीकार करता है। अपने क्रियाकलापों में सदैव तत्पर रहता है।** उसका नाम कर्त्तव्यवाद है। जैसे एक मेरी प्यारी! माता अपने पुत्र का पालन कर रही है। मानो अति मोह करती है तो ये जान लेती है, जो तू ये मोह कर रही है और जब मुनिवरो! देखो, ये कहती है ये बाल्य तू ब्रह्मवेत्ता बने। हे बाल्य तू महान् बन करके तू विचरण कर। हे बाल्य! तू मानो मेरे गर्भाशय को दूषित मत कर देना। मानो देखो, मैं तेरी ममता में रहा हूँ। मेरे प्यारे! माता जब इस प्रकार की शिक्षा देती है तो वो कर्त्तव्य पारायण कहलाती है, वो कर्त्तव्य में निहित हो जाती है।

जैसा मैंने तुम्हें कई काल में प्रगट कराया बेटा! जब महर्षि विश्वामित्र, राम और लक्ष्मण इत्यादियों को अपने धर्नुयाग को पूर्ण करने के लिए, जब देखो राजा से ये कहा, राजन्! मुझे ये राम और लक्ष्मण चाहिए। मैं अपने याग को सम्पन्न कराना चाहता हूँ। तो राजा ने कहा, प्रभु! मैं आपके याग को मैं पूर्ण कराऊँगा। उन्होंने कहा, नहीं, मुझे शिशु चाहिए, मुझे युवा चाहिए, मुझे आप नहीं चाहिए। मेरे प्यारे! इतने में कौशल्या जी और सर्वत्र राजलक्ष्मियों ने चरणों की वन्दना की। उन्होंने कहा, कहो भगवन्! कैसे आगमन हुआ है? कौशल्या से कहा, हे माँ! अमृताम् ब्रह्मेः, हम देखो राम, लक्ष्मण और ब्रह्मचारियों से याग कराना चाहते हैं। मेरा धर्नुयाग चल रहा है। मेरे प्यारे! उन्होंने राजा से कहा, राजन्! आप प्रदान कीजिए। यदि हमारे गर्भ से उत्पन्न होने वाला बाल्य, यदि एक ऋषि की आज्ञा का पालन नहीं कर सकता, एक ऋषि के याग को पूर्ण नहीं सकता तो हमारा गर्भाशय दूषित हो जाएगा। मेरे प्यारे! देखो, कौशल्या ने जब ये शब्द कहा तो राजा निरुत्तर हो गए और मुनिवरो! देखो, राजकुमारों को प्रदान कर दिया। तो ये कर्त्तव्यवाद कहलाता है।

मेरे प्यारे! देखो, ये कर्त्तव्यवाद की आभा में महर्षि भृङ्गी ने कहा, रजन्नम् ब्रह्मेः, हे ब्रहे! देवी, मेरे विचार में ये आ गया है। परन्तु **वेदामृत को पान करने वाला कर्त्तव्य** क्या है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा कि आत्मा प्रकाश में रत्त रहता है और प्रकाश को जानना उसका कर्त्तव्य है और प्रकाश ही मानो देखो, **वेद रूपी प्रकाश में यदि आत्मा रत्त रहता है तो वह उस मानव का कर्त्तव्यवाद है।** वो उस ऋषि का कर्त्तव्यवाद है कि वेद की प्रतिभा के अनुकूल अपने जीवन को जो व्यतीत कर रहा है और गृह में वास कर रहा है। और गृह में मानो देखो, वेद मन्त्रों की ध्वनि आती हों वह राष्ट्र और समाज ऊँचे बनते रहते हैं।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है। **मनु वंश** में देखो मनु, मनु वंश ने ही मुनिवरो! देखो, अयोध्या का निर्माण किया था। अष्ट चक्रा नौ द्वारों वाली पुरी कहलाती है। कहलाती थी क्योंकि इस नगरी में आठ चक्र थे और नौ द्वार कहलाते थे, तो मानो देखो, जब राष्ट्र का निर्माण किया। तो मुनिवरो! देखो, ये नियमावली बन गयी राजा के यहाँ। राजा ने ये कर देई, क्या राजा के राष्ट्र में मानो प्रत्येक गृह में सुगन्धी होनी चाहिए। प्रत्येक गृह में वेदज्ञ ध्वनि होनी चाहिए जिससे वह गृह और मेरा राष्ट्र ऊँचा बन जाएँ। मानो देखो, ये भगवान् अक्ष्वा मनु ने भी ऐसा कहा, वृत्तिका मनु ने भी ऐसा ही कहा और मुनिवरो! देखो, वह शोधनी मनु ने भी इस प्रकार के नियम बनाए और इसी प्रकार के नियम बनते रहे। तो विचार-विनिमय क्या, मुनिवरो! देखो, गृह में गृहस्वामिनी और गृह स्वामी जब मुनिवरो! देखो, वेद का पठन-पाठन करते हों, दर्शनों का पठन-पाठन करते हैं और मानवीय दर्शन को अपने समीप लाते हैं तो मुनिवरो! देखो, गृहस्वामी और गृहस्वामिनी जब इस प्रकार के क्रियाकलाप को करते हैं तो उनके गृह में देखो जितना भी जन समूह है, चाहे वह पुत्री के रूप में है, चाहे वह पुत्र के रूप में उसकी इनके विचारों के अनुसार अपने गृह को स्वतीत करते रहते हैं। मेरे प्यारे! मैं विशेषता में नहीं ले जा रहा हूँ। वेद मन्त्र क्या कहते हैं वेद

मन्त्र यही कहते हैं, कि परमपिता परमात्मा ने हमारे मानव शरीर का निर्माण किया है। इसी प्रकार गृहस्वामी और गृहस्वामिनी मानो देखो, पञ्चमहाभूतों का एक शरीर का गृह का निर्माण और करते हैं जिसमें हम वास कर सकें। और तमोगुण ला करके हम, उग्र क्रिया ला करके हम सन्तान का उपार्जन कर सकें। मानो उसे पुनः से सतोगुणी बना सके। इसीलिए मुनिवरो! देखो, गृह, गृहों का निर्माण होता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, गृह में प्रातःकालीन सुगन्धी होनी चाहिए और वह सुगन्ध क्या है, मुनिवरो! देखो, वेदों का उद्घोष, वेदों की ध्वनियाँ और विचारों की ध्वनियों में जो गृह परणित रहते हैं बेटा! वही गृह पवित्र कहलाते हैं।

आओ, मेरे पुत्रो! मैं तुम्हें विशेषता में नहीं ले जाऊँगा। विचार केवल ये, क्या हमें मुनिवरो! देखो, गृह का प्रवेश करना है। हमें गृह में वास करना है जैसे आत्मा इस शरीर को जब त्यागता है तो पुनः किसी माता के गर्भस्थल में उसे स्थली प्राप्त हो जाती है। इसी प्रकार मेरे पुत्रो! ये जो गृह का अव्यत निर्माण होते हैं, इसी प्रकार होते हैं। **ये शरीर आत्मा का गृह है और ये जो बाह्य जगत है, बाह्य जो गृह है ये आत्मा के शरीर का गृह कहलाता है।** ये भी पञ्चमहाभूतों से सुगठित है और ये मानव शरीर भी मुनिवरो! देखो, पञ्चमहाभूतों का समूह है। तो विचार आता रहता है। दोनों में परमपिता परमात्मा निहित रहते हैं, जितना संसार जड़वत् में है, चेतन्यवत् में है, सर्वत्रता में वे प्रभु रमण करते रहते हैं। तो मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेषता में नहीं ले जा रहा हूँ। विचार केवल ये, क्या मुनिवरो! देखो, हमें अपने गृह को ऊँचा बनाना है, कर्त्तव्यवाद में निहित रहना है, यौगिकवाद में ले जाना है। जिससे हमारे देखो, परमपिता परमात्मा की महती और हम अनन्तता में रमण करते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएँ। आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेषता में नहीं ले जा रहा हूँ। विचार-विनिमय क्या, हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए, हम परमात्मा के स्वरूप को जानते हुए, मानो देखो, जो ग्रहों में भी निहित है,

जड़ में भी है, चेतन्यवत् में भी निहित है। तो मेरे प्यारे! वही तो महान् कहलाता है।

आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ। केवल विचार-विनिमय देने के लिए चला आता हूँ और ये विचार क्या है कि हम अपने को ऊँचा बनाए। जहाँ ब्रह्म-ज्ञान आत्मा का, आत्मा की प्रेरणा के अनुसार मानव कर्त्तव्यवाद में रत्त हो जाता है। आत्मा की प्रेरणा के साथ जो क्रियाकलाप करता है, आत्मा की प्रेरणा के साथ जो मानो जन-समूह में रमण करने वाला हो, वह महापुरुष कहलाता है और वह गृहस्वामी कहलाता है। वह उस गृह को अपनी सम्पदा नहीं, ये परमात्मा की सम्पदा है। क्योंकि द्रव्य भी परमात्मा की सम्पदा है और जिस गृह, जिस मानो देखो, जिस साकल्य से गृह का निर्माण, वो भी परमपिता परमात्मा की सम्पदा है। तो मेरे प्यारे! देखो, गृह में अभिमान नहीं होना चाहिए। अरे अभिमान किससे कर पाएँगे, जबकि परमात्मा की पवित्रता है, परमात्मा की देन है, परमात्मा का ये जगत है, परमात्मा का शरीर निर्माणित किया हुआ है। माता के गर्भस्थल में बेटा! हमारा निर्माण होता है परन्तु माता को प्रतीत नहीं हृदय कहाँ रहता है न मानव को प्रतीत होता है। परन्तु वह परमपिता परमात्मा निर्माण करने वाला है, वह निर्माणवेत्ता है, वैज्ञानिक है और वो इतना विज्ञानवेत्ता है कि उसके विज्ञान की कोई सीमा नहीं है। वो सीमा से रहित है। वह मानो देखो, अपने में अपनेपन को ही विचारता रहता है।

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष विचार देने नहीं आया हूँ केवल अपना विचार ये प्रगट करने के लिए आया हूँ कि गृह हमारा पवित्र हो। हमारा कर्त्तव्यवाद, मानवीयता को स्पर्श करता रहे और वह अपनी आभा में परणित होता हुआ प्रभु को प्राप्त हो जाएँ। बेटा! देखो, यही हमारे गृहों का निर्माण का अभिप्रायः कहलाता है। मुझे कहीं से ये प्रेरणा प्राप्त हुई, क्या गृह के सम्बन्ध में कुछ उद्गीत गाया जाएँ। तो मानो देखो, उस

प्रेरणा के साथ में मैंने अपने विचारों को व्यक्त किया है और वह विचार ये है कि हम देवत्व अपने में उपास्य बनते रहें।

महर्षि अगस्त्य मुनि महाराज का जीवन

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि भृङ्गी ने अपने ऋषि को मेरे प्यारे! देखो, तपस्या में परणित कराया। वही मुनिवरो! देखो, वह ''अमृताम् भूतम् ब्रह्मणेः क्रतम्''। मेरे प्यारे! देखो, वही बाल्य जिस गृह अमृता में देखो ऋषि भृङ्गी के पुत्र का नाम, मेरे प्यारे! देखो, उन्हीं के ''अमृताम् भूतम् ब्रह्मणेः लोकाम''। मेरे प्यारे! देखो, उन्हीं के पुत्र अगस्त्य मुनि बन करके रहा, वह अगस्त्य कहलाया। उनका, भृङ्गी के पुत्र का नाम अगस्त्य था। और वह अगस्त्य मुनि कैसे विचित्र थे। मेरे प्यारे! देखो, वह, वह इस संसार रूपी समुद्र को पान करके बेटा! देखो, उसे खारी बना करके त्याग दिया। मेरे प्यारे! ये जो संसार रूपी समुद्र है जिसमें कोई मान कर रहा है, कोई किसी का अपमान कर रहा है, कोई किसी का पूजन कर रहा है, तो कोई किसी का तिरस्कार कर रहा है। मेरे प्यारे! ऐसे संसार को जिसमें मुनिवरो! देखो, कहीं उष्णता है, और कहीं नम्रता है, कही महानता है तो कहीं उज्ज्वलता है। अरे! ऐसे संसार को मुनिवरो! देखो, महर्षि अगस्त्य मुनि महाराज ने बेटा! खारी बना करके त्याग दिया। खारी का अभिप्रायः क्या उससे उदासीन होना, क्या ये संसार तो इसी प्रकार गतिवान् होता है। मुझे तो अपने कर्त्तव्यवाद में रहना है, मुझे आत्मा की प्रेरणा को स्वीकार करना है और आत्मतत्त्ववेत्ता बन करके इस सागर से पार होना है, इस सागर को त्यागना है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह महर्षि भृङ्गी ऋषि के पुत्र कितने महान् और पवित्र बेटा! देखो, जिनका तपश्चर बड़ा महान् रहता था। अनुष्ठान करते रहते थे केवल इसीलिए कि मृत्यु से पार हो जाएँ।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः ये कि हम परमपिता परमात्मा की महती और उसकी अनन्तता को जानते हुए अथवा उसके ग्रह और देखो आत्मा के गृह और मानवीय गृहों को ऊँचा बनाते हुए इस सागर

से पार हो जाएँ। ये है बेटा! आज का वाक्। अब समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएँ तुम्हें कल प्रगट करूँगा। **वेद का मन्त्र कहता है** कि यह संसार मानव रूपी गृह है इसका स्वामी परमपिता परमात्मा है और मानव शरीर का स्वामी आत्मा कहलाता है। मुनिवरो! देखो, स्थूल रूप ले करके ये आत्मा मानो इस शरीर की रक्षा के लिए मानव गृहों का निर्माण करता रहता है। ये है बेटा! आज का वाक्। अब समय मिलेगा, मैं शेष चर्चाएँ तुम्हें कल प्रगट करूँगा। आज का वाक्य समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन।

ओ३म् देवाः आभ्याम् रथम् वाचन्न गायन्तवाः।
ओ३म् रथश्स्वाहा देवम् आपाः गतम् आभाः।।

दिनाँक : 31 मार्च, 1990
स्थान : गाजियाबाद, उ.प्र.

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को निरन्तर प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है–

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.) PAN No. – AAAAV7866J
पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली
बैंक खाता नं. 0149000100229389, IFS Code - PUNB 0014900

शृङ्गीऋषि बेवसाईट
Website : www.shringirishi.in
Email : contact@shringirishi.in

॥ ओ३म् ॥

भगवान् कृष्ण द्वारा नाग मन्थन

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद वाणी में परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी हैं और यह जो जगत उस परमपिता परमात्मा की प्रतिभा है, उसका एक वृत्त रूप कहा गया है। हमारे प्रत्येक वेद मन्त्र में उस परमपिता परमात्मा की महती और उसकी अनन्तता के ऊपर सदैव विचार-विनिमय होता रहा है। हमारे यहाँ ऋषि-मुनि परम्परा से अन्वेषण और अनुसन्धान करते रहे हैं, एक-एक वेद मन्त्र के ऊपर उनका बड़ा आधिपत्य रहा है और विचार-विनिमय करने वाले उस परमपिता परमात्मा की महती और उसके ज्ञान विज्ञानमयी स्वरूप में प्रायः रमण करते रहे हैं और ऊँची-ऊँची उड़ानें उड़ते रहे हैं। आज का हमारा वेद मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है जिसके ऊपर हमारा 'वृत्भ ब्रह्मणम् लोकाम् वायु संभवत्ः' क्योंकि हमारे यहाँ जितना भी पाण्डित्व रहा है वह वेद मन्त्रों की ध्वनियों में ध्वनित होता रहा है जिसके ऊपर मानव बड़ी गम्भीरता से अपने में मनन और रिध्यात्म करता रहा है।

जय और विजय

आओ मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें साहित्य के उन पृष्ठों में ले जाना चाहता हूँ जहाँ हमारे यहाँ राष्ट्रवाद और मानववाद के ऊपर विचार-विनिमय होता रहा है। मुझे वह काल भलीभाँति स्मरण आता रहता है जब महर्षि

कपिल मुनि के यहाँ नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते रहते थे और वे पातालपुरी में अपना वास करते थे। एक समय जय और विजय दोनों ही उनके शिष्य कहलाते थे परन्तु अस्त्रों-शस्त्रों की विद्या में वे बड़े पारायण थे। जय और विजय अपने में अन्वेषण और अनुसन्धान करते रहते और नाना प्रकार के ज्ञान, विज्ञान और अस्त्रों-शस्त्रों में वे रत्त रहे हैं। विचार और मनन करने योग्य क्रियात्मकता में लाने के लिए उनका बड़ा अनूठा अधिपत्य रहा है और वे अपने में यह विचारते रहे हैं कि हम अपने में अध्ययनशील बने और एक-एक परमाणु और अणु तरङ्गों के ऊपर हमारा आधिपत्य होना चाहिए। जय और विजय दोनों ही महर्षि कपिल मुनि महाराज के यहाँ विद्या अध्ययन करते रहते थे। कपिल मुनि महाराज अपने में बड़े यावंधवी और वे अश्वमेध याग के ऊपर अपना विचार-विनिमय करते रहते थे। उसके ऊपर उनका बड़ा अधिपत्य रहा है कि अश्वमेध याग में क्या-क्या होना चाहिए, किस प्रकार का क्रियाकलाप होना चाहिए उसके ऊपर बड़ा अनुसन्धान करते रहते।

पातालपुरी से पलायन

आओ बेटा! आज मैं तुम्हें उस साहित्य में या विशेषता में नहीं ले जा रहा हूँ, तुम्हें एक वाक्य ऐसा प्रगट करने जा रहा हूँ जब पातालपुरी में एक रक्तमयी क्रान्ति उत्पन्न हुई और उस रक्तमयी क्रान्ति में उनका जो राज्य और समाज था वह सब अस्त-व्यस्त हो गया। समाज के प्राणी प्रत्येक राष्ट्रों में जा पहुँचे। मेरे पुत्रो! एक नाग जाति, एक नाग सम्प्रदाय का भारत की भूमि पर वास हुआ, उन्होंने अपना वास किया वे यहीं परणित्थमि वृष्यम ब्रही क्राष्यताः, हमीं में वे सम्मिलित हो गए और उनके मिलान का, उनकी वृत्तिका हमीं में परणित हो गई। नाग जाति यहाँ बहुत समय तक, द्वापर के काल तक वास करती रही। द्वापर के काल में जब पुनः रक्तमयी क्रान्ति आई तो कुछ इसी प्रकार नाग सम्प्रदाय के प्राणी पुनः इस भार्यरस्तम महाभारत काल से पूर्व इसमें वास कर गए और एक काली दह, एक स्थान

उन्होंने नियुक्त किया और उसी में वास करते रहते थे। भगवान् कृष्ण के काल में उनका विलय, अपने में ही वह अपनेपन को दृष्टिपात करने लगे। नाग सम्प्रदाय का कालीदह एक स्थान था, जो पर्वतों की आभ्यों (आभाओं) में रमण करता रहता, उसी में वे वास करते थे। भगवान् कृष्ण विद्यालय में अध्ययन करने के पश्चात् जब युवा हुए तो उस सम्प्रदाय को उन्होंने अपने में परणित किया। साहित्यिक चर्चा में मैं तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। मैं तुम्हें यह निर्णय देना चाहता हूँ कि ये सब प्राणी किसी भी राष्ट्र से आ जाएँ–चाहे वे पातालपुरी से आ जाएँ, चाहे मङ्गल मण्डल से आ जाएँ उन सबका एक ही विलय होता रहा है। मानव समाज एक ऐसी प्रतिभा है जिसमें मानव मानवीयता की दृष्टि से जब मनन करता है तो वह ईश्वरीय यौगिकता में परणित हो जाते हैं।

दो प्रकार की विचारधारा

मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा कि हमारे यहाँ दो प्रकार की विचार धाराएँ परम्परागतों से रही हैं–एक रूढ़ि होती है एक यौगिक होती है। **रूढ़ि में पालन है, राष्ट्रवाद है और रूढ़ि में ब्रह्म कहलाया जाता है।** एक यौगिक होता है, यौगिक उसे कहते हैं जिसका आत्मा से समन्वय होता है, आत्मा से जिसका सम्बन्ध होता है और वह आत्म चिन्तन करने के पश्चात् अपने को वह यौगिकवाद में ले जाते हैं। **यौगिकवाद में आध्यात्मिकवाद है, मानव दर्शन है और वैदिकता की प्रतिभा उसमें निहित रहती है।** विचार आता रहता है कि आज हम रूढ़िवाद को त्याग करके यौगिकवाद में रमण करते चले जाएँ क्योंकि यौगिकवाद मानव तथ्य कहलाता है और वह मानवीयता से गुथा हुआ होता है इसलिए वह यौगिक कहलाता है। हमारे यहाँ भगवान् कृष्ण के जीवन में रूढ़ि नहीं थी उनके यहाँ एक यौगिकवाद था जितना भी उनका क्रियाकलाप रहा है वह सर्वत्र क्रियाकलाप रूढ़िवाद में न रह करके वह यौगिकवाद में परणित रहा है।

तीन प्रकार के प्राणी

हमारे यहाँ त्रिवर्णप 'प्रमाणप ब्रहे' तीन प्रकार के प्राणी होते हैं। एक वह प्राणी होता है जो संसार में हारा हुआ दृष्टिपात आता है। एक प्राणी वह होता है जो प्रभु के राष्ट्र में अपने को स्वीकार करता है कि मुझे मानव रहना है और मानवीय जगत में मैं मानव दर्शन को लाता हुआ परमात्मा को प्राप्त होना चाहता हूँ, जैसा मैं परमात्मा की सृष्टि में आया हूँ वैसा ही मेरा यह जीवन चला जाए। और तीसरा प्राणी वह होता है जो अतिमानव होता है। अतिमानव उसे कहते हैं जो यौगिकवादी होता है वह योग में अपनी आभा, अपना विचार, अपनी तरङ्गों को उसमें तरङ्गित कर देता है।

विचार आता रहता है, **हारा हुआ कौन-सा प्राणी है?** जो परमात्मा के राष्ट्र में आकर के अपने को उग्रवादी बना देता है। **उग्रवादी हमारे यहाँ दो प्रकार के माने गए हैं।** एक उग्रवादी वह होता है जो निम्न श्रेणी का होता है, अपने स्वार्थ के लिए वह प्राणी, प्राणी को नष्ट करने के लिए तत्पर है। अपने शरीर से, अपने भुजों से जो क्रियात्मक कर्म नहीं कर पा रहा है वह केवल दूसरों के भुजों के द्रव्य को अथवा अपने में स्वार्थवाद की प्रथा में तत्पर हो जाता है तो वह प्राणी हारा हुआ प्रतीत होता है। वह हारा हुआ है परमात्मा की सृष्टि में, जो एक मानव, मानव को नष्ट कर रहा है, उसका आयु भी सूक्ष्म बन रहा है, उसकी आयु में गति नहीं हो रही है, वह केवल निम्नता में परणित हो रहा है। वह मानव हारा हुआ प्रतीत होता है। वह हारा हुआ है जो अपने मानवत्व को ऊँचा नहीं बना सकता, वह उग्रवादी प्राणी, प्राणी को नष्ट कर रहा है अपनी द्रव्य की लोलुपता से, द्रव्य की आभा में वह अपने को नष्ट कर रहा है तो वह प्राणी हारा हुआ दृष्टिपात आता है।

दूसरा प्राणी, 'मङ्गलम् ब्रह्माः' वह परमात्मा की सृष्टि में आया है और सृष्टि में आ करके वह **अपने में अपनेपन का भान कर रहा है। योग साधना में क्या, प्राणायाम, प्राण सत्ता को अपने में धारण कर रहा**

है। वह मानव है। वह मानव, मानव कहलाता है जो राष्ट्रीय स्तर पर अपने जीवन को ऊँचा बना रहा है। राष्ट्र में सत्यता को अपने में धारण कर रहा है और वह राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है। अपने को उसमें ले जाता है, परमात्मा के राष्ट्र में अपने को भी स्वीकार करता है और स्वीकार करके अपने में अपनेपन का भान करता हुआ जैसा प्रभु के राष्ट्र में वह आया है वैसे ही प्रभु के राष्ट्र में उसका जीवन व्यतीत हो जाता है तो वह मानव कहलाता है। **वह माननशील है और मनन करता हुआ अपने में यह स्वीकार कर रहा है कि मैं अपने में परमात्मा के राष्ट्र में आया हूँ मेरा कर्त्तव्य है कि मैं अपने भुजों से, अपने में क्रियाकलापों में परणित हो जाऊँ।** मेरे शरीर में जो मेरे पिता ने, परमपिता परमात्मा ने जो प्राण दिए हैं, दस प्राण हैं, इन्हीं प्राणों के आश्रित हो करके मुझे अपने जीवन को व्यतीत करना है। अग्न्याधानम् ब्रह्माः, वह अग्नि का ध्यान करता हुआ, वह आपों में रमण करता हुआ, वह गुरुत्व में अपने को वास करता हुआ यह स्वीकार कर रहा है कि मैं परमात्मा के राष्ट्र में विद्यमान हूँ और मेरा यह कर्त्तव्य है कि मैं परमपिता परमात्मा की महती और अनुपमता को जान करके इस सागर से पार हो जाऊँ। वह परमात्मा को प्राप्त होना चाहता है। **वह मानव कहलाता है** और मानवीय दर्शन में दर्शित हो जाता है।

एक वह मानव जिसे हम **अतिमानव** कहते हैं, अति मानवत्व कहते हैं, वह अतिमानव कैसा है? **जो ऊर्ध्वा में गमन करता है,** अपनी मानव दर्शनों की उग्र क्रिया बनाता है, प्राण सत्ता के द्वारा प्राण में रत्त होता हुआ वह अपने को प्राण में परणित कर देता है। वह प्राण को जब अपान में परणित कर देता है तो वह यौगिकवाद में परणित हो जाता है। वह अपने में यह स्वीकार कर रहा है कि यह प्राण सत्ता तो सर्वत्रता में विद्यमान है यह प्राण वायु में, पृथ्वी में, अग्नि में, आपो और ज्योति सबमें यह प्राण सत्ता है। प्राण के कारण ही इस ब्रह्माण्ड का पिण्ड बना हुआ है, इस प्राण के कारण ही यह गतिशील हो रहा है। गतिशील जो जगत हो रहा है इस गतिशील को

विचारना है, इसकी आभा में रत्त होना है और परमात्मा के राष्ट्र को चिन्तन में लाना है जिससे हम अतिमानव बन सकें और अतिमानव बन करके हमारी उग्र क्रिया बन जाए। हमारे यहाँ जो आध्यात्मिक उग्र क्रिया है वह अति-मानवता में परणित हो जाती है और वह यौगिकता कहलाती है।

जब नाना ऋषि-मुनियों की चर्चाएँ मुझे स्मरण आने लगती हैं हमें यह संसार बड़ा आश्चर्यमय दृष्टिपात आने लगता है। मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय महर्षि विभाण्डक के पिता **रोहणीवृत्तिका** अपने आसन पर विद्यमान थे। वे अपने में यह विचारने लगे, वेद में एक मन्त्र आया था, वेद का मन्त्र कह रहा था **'आसन जन्म ब्रह्मेः यौगिक अस्सुताम् ब्रह्मः लोकाः'** वेद की आख्यायिका कह रही है, वृत्तिका मुनि ने विचारा कि अतिमानव बन करके मेरा जीवन यौगिकवाद में परणित हो जाए। अब यौगिक कैसे बनेंगे? मेरे प्यारे! देखो, प्राण सत्ता को जानने के पश्चात्। हमारे शरीर में दस प्राण कहलाते हैं। एक प्राण को हम नाग कहते हैं। यह जो नाग प्राण है इस नाग प्राण के ऊपर त्रेता के काल में वृत्तिका मुनि ने और रावण के पुत्र मेघनाथ दोनों ने बड़ा अध्ययन किया था। उनका नाग प्राण के ऊपर इतना अधिपत्य रहा।

नाग प्राण कहते किसे हैं? जब मानव को अति क्रोध आता है तो नाग प्राण का ऊर्ध्वामुख हो जाता है जिससे मानव के शरीर में जो अमृत बह रहा है, उस अति क्रोध आवेश के कारण नाग प्राण का ऊर्ध्वामुख हो करके वह विष को उगलने लगता है। वह विष को पानम् ब्रहे, विष को वह अवृत्ति कर देता है और अमृत जो बह रहा है उसको वह भस्म कर देता है। अमृत को भस्म करने और अपने विष को उगलने से मानव में एक विषधर्ता आ जाती है, एक विष उत्पन्न हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, रावण के पुत्र मेघनाथ ने भी 'ब्राह्मणम् ब्रहा कृतम्' उसी नाग प्राण के आश्रित हो करके उन्होंने इन्द्र को विजय किया। जब राम और रावण का संग्राम हुआ था तो उन्होंने लक्ष्मण के ऊपर उसी नाग प्राण का प्रहार किया। वह नाग प्राण

हमारे यहाँ बड़ा विशिष्ट रहा है। हमारे यहाँ यह विद्याएँ परम्परागतों से रही हैं। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में इन विद्याओं का चलन और इनके ऊपर अधिपत्य होता रहता था। मुझे स्मरण है वृत्तिका मुनि महाराज ने इसके ऊपर बड़ा अध्ययन किया। प्राण और अपान को दोनों को एक सूत्र में लाने का प्रयास किया। प्राण को अपान में और अपान को व्यान में और व्यान को समान में और समान को उदान में परणित करते हुए, एक सूत्र में परणित हो करके उसके पश्चात् नाग प्राण के वृष से विशिष्टता मानी गई है।

आज इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा प्रगट करने मैं नहीं आया हूँ। विचार तुम्हें यह प्रगट करने आया हूँ कि वह जो वृत्तिका मुनि की चर्चा हो रही थी वे यौगिकवादी थे और यौगिकवादी जो प्राणी होता है वह प्राण को सर्वत्रता में दृष्टिपात करता है, मानव, मानव में प्राण को दृष्टिपात करता है और वही प्राण को मनस्तत्त्व के साथ गमन कराता हुआ वह किसी भी लोक-लोकान्तरों में परणित हो जाए परन्तु वहाँ भी उन्हीं की प्रतिभा निहित रहती है, आभाउ अब्रहा, आभा उदय हो जाती है। तो मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या? मैं विचार यह दे रहा था कि **वह मानव अतिमानव बनता है जो प्राणों के ऊपर अध्ययन करता है,** प्राणों को अतिमानवता में प्रवेश करा देता है तो वह अतिमानव रूढ़ि को त्याग करके यौगिकवाद में परणित होता हुआ अपने को इस संसार में यौगिकवादी स्वीकार करके अतिमानवता में प्रवेश कर जाता है।

मैं तुम्हें उच्चारण कर रहा था वह मानव है जो हारा हुआ दृष्टिपात करता है। जैसे मैंने कई कालों में तुम्हें वर्णन कराया, जैसे जो मानव अतिमानव दुरव्यवहारों में परणित हो जाता है वह अपने को हारा हुआ स्वीकार करता रहता है। जो स्वार्थपरता में रत्त होता है जो रूढ़ियों से भी अति रूढ़ियों में है वह विनाश के मार्ग पर चला जाता है, राजा अपने राष्ट्र में राष्ट्रीयता को नष्ट कर देता है जब अति स्वार्थता में परणित हो जाता है

उसकी मानवीयता नष्ट हो जाती है, उग्रता आ जाती है वह मानव, मानव को नष्ट करने लगता है। मुझे स्मरण आता रहता है महाभारत के काल में दुर्योधन अतिमानव न बन करके उग्रवादी बन गया और स्वार्थपरता के कारण महाभारत का काल ऐसे कृत्यों में रत्त हो गया कि धर्म शान्त हो गया। मुझे स्मरण है अतिमानव को स्वार्थपरता ही उग्रवादी बनाती है, विनाश मार्ग पर ले जाती है। **यदि मानव शान्त चित्त रहता है वह मानव बन करके प्रभु को प्राप्त होता है और जो अतिमानव है, अतिमानवसत्व है वह प्राण अपान और मन को एकाग्र करता हुआ वह यौगिक बन करके परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाता है, वह परमात्मा की आभा में परणित हो जाता है।**

मैंने इससे पूर्व काल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा था कि हम अपने में अतिमानव बन करके याज्ञिक बने। याज्ञिक भी अतिमानव बन जाता है जब बाह्य जगत के याग में परणित हो करके अग्न्याधान करता है वही जब प्राण की पञ्चाग्नि को जब जागरुक कर देता है और पञ्चाग्नि को जब प्रदीप्त करता है तो वह जो मनस्तत्त्व, इन्द्रियों का साकल्य है उसमें प्रवेश करके वह यौगिक बन जाता है, वह अतियोगी, अतिमानव बन जाता है। वह जहाँ विद्यमान होता है वहीं सुगन्धि आने लगती है। मुझे वह काल, ऋषियों का जीवन स्मरण आता रहता है जहाँ महर्षि काग्भुषुण्ड जी विद्यमान होते थे वहीं सुगन्ध आने लगती थी। वे सुगन्ध में परणित हो जाते थे। इसी प्रकार जब मानव अपनी मानवीयता को यौगिकवाद में ले जाता है तो अति मानव बन करके जीवन में सुगन्धि आने लगती है और वह परमपिता परमात्मा की महती और अनुपमता को प्राप्त करने लगता है।

पातालपुरी में क्रान्ति से नाग जाति का भारत में आगमन

आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ आज मैं तुम्हें यह उच्चारण कर रहा था कि इसी प्रकार की क्रान्ति राष्ट्रों में होती है। महात्मा

कपिल मुनि की मैं चर्चा कर रहा था। कपिल मुनि महाराज के यहाँ जय और विजय दो ब्रह्मचारी थे जो अणु और परमाणु की विद्या को जानते थे। दोनों के ही कारण, अब्रहे, पातालपुरी में एक क्रान्ति हुई जिस क्रान्ति में मानव वहाँ से इस भूमि पर आए और वे इसी में रत्त हो गए। यह एक क्रान्ति महाभारत काल से पूर्व हुई थी। जब पाण्डु राजा ने अपने राष्ट्र को उन्नत किया, तो वे पातालपुरी में पहुँचे और पातालपुरी में रक्त भरी क्रान्ति उस काल में भी आई परन्तु वहाँ से नाग जाति, नाग एक सम्प्रदाय था, वह इस भूमि पर पुनः हिमालय की आभा में एक कालीदह, एक स्थली थी वहाँ उनका वास रहता था और वे अपने को क्रान्ति में रत्त कराते रहते थे। भगवान् कृष्ण ने उनको अपने में रत्त कराया अपने में मिलान की चर्चा अब्रहा, शेष चर्चाएँ मैं कल प्रगट करूँगा।

यौगिकवाद अपनाएँ

आज का विचार क्या था कि हम परमपिता परमात्मा की महती और अनुपमता के ऊपर विचार-विनिमय करते चले जाएँ और उन विचारों में रत्त होते चले जाएँ। मानव उग्रवादी स्वार्थपरता में न जा करके वह मानव बने या अति मानव बने, यौगिकवाद में अपने को ले जाए क्योंकि यौगिकवाद ही मानव को ऊँचा बनाता है। यौगिकवाद में जाने वाला प्राणी अपने में योगेश्वर कहलाता है, वह अतिमानव कहलाता है वह परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो आता है। यह है बेटा! आज का वाक्।

आज का वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि वह परमपिता परमात्मा महान् है, पवित्र है, वह इस संसार की एक-एक आभा में निहित रहता है। तो हम उस परमपिता परमात्मा की महती और अनन्नता के ऊपर विचार-विनिमय करते और प्रत्येक इन्द्रिय के विषयों का साकल्य बना करके हम याज्ञिक बनते चले जाएँ। हम अपने आत्मतत्त्व को जानने वाले, प्राण और अपान को जान करके इस विद्या को अपने में धारण करते चले जाएँ, अपने में अपनेपन का भान करते चले जाएँ। अपने में अपनेपन

को दृष्टिपात करने से यौगिकवाद आता है। यौगिकवाद की चर्चाएँ हम कल प्रगट करेंगे। आज का वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

वेद पाठ .....

महर्षि महानन्द जी–अच्छा भगवन्!
पूज्यपाद गुरुदेव–आनन्द मङ्गलाचार, शान्ति।

दिनाँक : 25 जनवरी, 1989
स्थान : श्री महावीर सिंह
दिल्ली गेट, दिल्ली

पातालपुरी (अमेरिका) में क्रान्ति के पलायन से नाग जाति का भारत में आगमन और मन्थन के विषय में पूज्यपाद गुरुदेव एवम् महर्षि महानन्द मुनि जी महाराज के द्वारा दिए गए प्रवचनों के अंश

दिनाँक 26 जनवरी, 1989, दिल्ली गेट, दिल्ली

जबसे इस संसार में राष्ट्रवाद की अनुभूति होने लगी है तभी से मानव, मानव के रक्त का पिपासु बन गया है। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें कहा था कि राष्ट्रवाद की उपलब्धि यह नहीं है। राष्ट्रवाद की जो सबसे महान् उपलब्धि है वह यह कि प्रत्येक मानव अपने कर्त्तव्य का पालन करने लगे। कर्त्तव्यवाद में जब मानव और राष्ट्र दोनों का समन्वय हो जाता है तो मानव अपनी मानवीयता में रत्त हो करके कर्त्तव्यवाद की वेदी पर निहित हो जाता है।

महात्मा कपिल मुनि महाराज के समय में, उनके विद्यालय के ब्रह्मचारी अपने अस्त्रों-शस्त्रों की आभा में नियुक्त होने से पातालपुरी में एक रक्त भरी क्रान्ति की उपलब्धि हुई थी। मैं बहुत पुरातन काल की चर्चा कर रहा हूँ वही क्रान्ति राजा सगर के यहाँ हुई थी जब कपिल मुनि का अपमान

किया तो उनके ब्रह्मचारी जय और विजय ने अपने वैज्ञानिक यन्त्रों से राजा सगर की बहुत-सी सेनाएँ नष्ट कर दी। सेना नष्ट होने से राजा सगर को यह अनुभव हुआ कि मेरी सेना क्यों नष्ट हुई क्योंकि कर्त्तव्य का पालन न करने से राजा के राष्ट्र में रक्त भरी क्रान्तियाँ आ जाती हैं।

आलस्य और प्रमाद के आने पर मानव कर्त्तव्य का पालन नहीं कर रहा है वह अधिकार को चाहता है कि मुझे अधिकार प्राप्त हो जाए, **जब अधिकार को पुकारने लगता है तो कर्त्तव्य वहाँ नहीं रहता।** संसार का कोई राष्ट्रवाद ऐसा नहीं है जो वह किसी के अधिकार को पूर्ण कर सके। मुनिवरो! देखो, **जो कर्त्तव्य का पालन करता है तो अधिकार तो मानव को स्वतः ही प्राप्त हो जाता है** मानव स्वतः ही अपने में अपनेपन का भान करने लगता है और जब वह अधिकार चाहता है वह अनाधिकार को अधिकारता में लाना चाहता है तो उस काल में राष्ट्र और समाज में रक्त भरी क्रान्तियाँ आ जाती हैं, राष्ट्रवाद विकृत हो जाता है, राष्ट्रवाद की प्रणालियाँ समाप्त हो जाती हैं। विज्ञान का जितना दुरुपयोग होता है उतना ही समाज अव्यवस्थित हो जाता है। इसीलिए विज्ञान में सात्विकता होनी चाहिए। **विज्ञान का सदुपयोग राष्ट्र और समाज का जीवन है** और विज्ञान का दुरुपयोग करने से राष्ट्र की मृत्यु हो जाती है, समाज की मृत्यु हो जाती है।

राजा सगर की सेना ने महर्षि कपिल मुनि महाराज को दण्डित किया और कपिल मुनि महाराज के विद्यालय में ब्रह्मचारियों ने सेनाएँ समाप्त कर दीं। राजा सगर महान् राजा थे अपने में बड़े नृत्या असुतः करते रहते थे। पातालपुरी में जय और विजय ने रक्त भरी क्रान्तियाँ कीं थीं। उसके परिणामस्वरूप वहाँ का समाज अस्त-व्यस्त हो गया था। द्वितीय उस काल में अस्त-व्यस्त हुआ जब पाण्डु अपने राष्ट्र को अपना करके उसको विचित्र और विशाल बनाते वह भी पातालपुरी पहुँचे। पातालपुरी का समाज उस समय भी अस्त-व्यस्त हो गया और नाग सम्प्रदाय के प्राणी वहाँ से इस भूमि पर आए।

–पूज्यपाद-गुरुदेव

दिनाँक 27 जनवरी, दिल्ली गेट, दिल्ली

पातालपुरी में नाग नामक एक सम्प्रदाय था वह महाराजा सगर और पाण्डु के समय हुई क्रान्तियों में यहाँ आया। वह नाग (सर्प) नहीं वरन् मानव सम्प्रदाय था। वह सम्प्रदाय यहाँ आकर हम सबमें रमण कर गया, उनका विचार उनका क्रियाकलाप सब इसी में रत्त हो गया। परन्तु आधुनिक काल में ऐसी निष्क्रियता आई है कि इसमें अपने में मिलान करने की प्रवृत्ति सूक्ष्मतम रह गई है। **–महर्षि महानन्द जी**

दिनाँक 31 जनवरी, 1989, ग्राम माछरा, मेरठ

आधुनिक काल में नाग सम्प्रदाय को एक सर्प स्वीकार करते हैं और वे कहते हैं कि भगवान् कृष्ण ने कालीदह में जा करके उसका मन्थन किया, उसको नाथा गया हमारे यहाँ नाथने का अभिप्रायः है कि उन्हें आश्रय देना। उनको अपने विचार देने का नाम उनको नाथन करना है। ये नाग कहाँ से आए? महाभारत काल में उसे पातालपुरी कहते थे आधुनिक काल में उसे अमरीका नाम से वर्णन किया जाता है। महर्षि कपिल मुनि महाराज अपने विद्यालय को पातालपुरी में स्थित करते थे। भगवान् कृष्ण ने कालीदह में जाकर के समुद्र के तट पर उन्हें अपनाने का प्रयास किया और महाभारत के काल में पाण्डु को जब राजा बनाया तो उन्होंने भी भीष्म की आज्ञा का पालन करते हुए पातालपुरी में एक क्रान्ति उत्पन्न की जो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराई। जब क्रान्ति आई तो वहाँ सम्प्रदायों का एक नृत बन गया, वहाँ महाभारत के काल में भी, वाममार्ग के काल में सम्प्रदायों का निर्माण हुआ और यह सम्प्रदायों का राष्ट्र बन गया। नाग सम्प्रदाय वहीं से भारत भूमि पर आया। भगवान् कृष्ण ने उसका अपने में नाथन किया, अपने में मिलान करने का प्रयास किया और वे सब मानव इसी देश और सम्प्रदाय में परणित हो गए।

आधुनिक काल में ऐसा स्वीकार करते हैं कि भगवान कृष्ण ने चार (4) या पाँच (5) वर्ष की अवस्था में कालीदह में जाकर नाग के रक्त को

बहाया। नाग को सर्प स्वीकार करते हैं जो रेंगने वाला प्राणी है। ऐसा कहते रहते हैं कि नाग और उसकी पत्नियाँ नागनी ने उनसे प्रार्थना कर कहा कि तुम तो प्रभु हो, भगवान् हो और ऐसा कह करके वे उसे यहाँ से दूरी कर देते हैं और वह जल में विष उगलते रहते हैं। यह तो एक अलङ्कारिक वार्त्ता है। नाथने का व्यावहारिक दृष्टि से यह अभिप्रायः बना कि भगवान् कृष्ण ने उनका अपने में मिलान किया। यौगिकवाद में जब योगी जाता है तो उसके पाँच अवगुण जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार इनमें से यदि कोई भी साधक को आ जाता है तो सर्प का प्रभाव आ जाता है विषधर बन करके। उसके अमृत को विष बनाने के तुल्य अपना क्रियाकलाप करने लगता है। ऐसा यौगिक सूत्रों में आया है कि भगवान् कृष्ण जहाँ अध्ययन में इतने पारायण थे वहाँ योग में भी उनकी बड़ी प्रवृत्ति थी और वे जब योगाभ्यास करने लगे तो यह पाँचों फनों वाला शेषनाग बन गया, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहङ्कार उसके फन कहलाते हैं, इसलिए भगवान् कृष्ण अपने योगाभ्यास के द्वारा, अपनी प्रवृत्ति और विवेक के द्वारा इसके फनों के ऊपर नृत्य करने लगे और लक्ष्मी चरणों में ओत-प्रोत हो करके वृत्त होने लगी तो नागनियाँ भी इनके अधीन हो, करके वृत्त हो करके मानो नाग मन्थन हो गया। उन्होंने जब नाग का मन्थन किया तो मन्थन करने के पश्चात् उसको अपने में रत्त करा करके वह यौगिक प्रतिक्रिया बन गई।

इसीलिए यौगिक प्रतिक्रिया में यह पाँच फनों वाला शेषनाग है और सामाजिक पद्धति में यह कि नाग सम्प्रदाय पातालपुरी से आया उसको अपने में मिलान किया। भगवान् कृष्ण ने राष्ट्र की पद्धति और ज्ञान की पद्धति अपना करके नाग सम्प्रदाय को अपने में मिलान करने का प्रयास किया। राष्ट्र ऊँचा जब बनेगा जब राष्ट्र में भिन्न-भिन्न प्रकार की रूढ़ियाँ नहीं रहेंगी। इन रूढ़ियों के विनाश में राजा को लग जाना चाहिए। रूढ़िवादियों के आचार्यों का शास्त्रार्थ हो, विचार हो और ब्रह्मवेत्ता राजा जो ब्रह्म का विचारक हो वह सम्प्रदायों को नष्ट करने, एकोकीकरण में लग जाएँ तो यह समाज रक्त भरी क्रान्ति का नहीं रहेगा।

–महर्षि महानन्द जी

दिनाँक 4 मई, 1989, मथुरा

जहाँ यह हमारी वाणी याज्ञाम ब्रहे, यहाँ भगवान् कृष्ण ने भी विशाल-विशाल यागों का आयोजन किया है। मैं उस याग की चर्चा करूँ जो भगवान् कृष्ण ने बड़ा विचित्र याग किया जिस याग की इस वर्तमान युग में भी, वर्तमान काल में भी जिस याग की आवश्यकता रहती है। द्वापर के काल में पातालपुरी में एक क्रान्ति आई उस क्रान्ति में नर संहार होने लगा तो नाग नाम की कुछ जातियाँ पातालपुरी को त्याग करके यहाँ इस भारत भूमि पर आ गईं। यहाँ मानव ने उस नाग जाति से कुछ घृणा की तो भगवान् कृष्ण ने इसी स्थल (मथुरा) में एक नाग याग किया था। नाग याग का अभिप्रायः यह कि नाग जाति के प्राणी जो पातालपुरी से आए उन सबका एकोकीकरण कर दिया। राष्ट्रीय दृष्टि से, राष्ट्रीय प्रतिभा से उस नाग को जातीयता में न रहकर नागम् ब्रह्मेः वस्तुतः सुप्रजाः वे नाग बने हुए, वे नाग नहीं थे प्राणी थे, परन्तु नागों को एकोकीकरण करके अपने में सम्मिलित कर लिया। राष्ट्र पवित्र बन गया। यह कहा जाता है कि उन्होंने नाग का मन्थन किया। नाग के मन्थन का अभिप्रायः यही माना जाता है कि उनका शुद्धिकरण, उन्हें हिसा से अहिंसा में लाने को वे तत्पर हुए और अहिंसामय बन करके उनके विचारों का मन्थन हो गया।

आधुनिक काल में कालीः क्रम में, कृष्ण को मानने वाले आधुनिक प्राणी कहते हैं कि यहाँ काली एक नाग था। अरे! नाग को तो कोई भी प्राणी नष्ट कर सकता है परन्तु, नाथने का अभिप्रायः क्या हुआ? नाथने का अभिप्रायः यह कि उन्हें अपने में सम्मिलित, विचारों में विचरित करते हुए वह एकोकी राष्ट्रीयकरण बन गया था। भगवान् कृष्ण ने एक राष्ट्रीय याग किया जिसमें नाग जाति के प्राणी सम्मिलित हुए, उनका राष्ट्रीयकरण हुआ। उस राष्ट्रीय याग को आधुनिक काल का मानव कहता है कि भगवान् कृष्ण बाल्यकाल में कालीदह में चले गए, नाग के ऊपर नृत्य किया। नृत्य का अभिप्रायः यही है कि अपने विचारों को देना और उनका एकोकीकरण करना। नाग जाति

के लाखों प्राणी उन्होंने एकोकीकरण में परणित कर दिए। आधुनिक काल में इस भारत भूमि में कहीं-कहीं नाग जाति के, नाग कहलाने वाले प्राणी आज भी विद्यमान हैं। नागों में याग होने लगे थे, घृणा नहीं रही। घृणा के स्तर पर ही यह मानव समाज समाप्त हो जाता है। भगवान् कृष्ण ने घृणा का अस्तित्व समाप्त कर दिया। जहाँ जिसकी अनाधिकार पूजा होती थी उस पूजा को उन्होंने अधिकार में लाने के लिए प्रयास किया। पच्चीस (25) वर्ष तक भगवान् कृष्ण समीपन ऋषि के पास अध्ययन करते रहे। पच्चीस (25) वर्ष पश्चात् उनका संस्कार हुआ और उसके पश्चात् वह संसार के कार्यों में रत्त हो गए। भगवान् कृष्ण का जीवन जो मुझे स्मरण है, बड़ा पवित्रता में परणित रहा है, महान् रहा है। भगवान् कृष्ण पत्र और पुष्पों का पान करते थे। उनके जीवन में कोई अश्लीलता नहीं थी।

–महर्षि महानन्द जी

सूचना

सभी आजीवन/वार्षिक सदस्यों को 'यौगिक प्रवचन' पत्रिका प्रत्येक मास की 10/11 तारीख को प्रेषित की जाती है। किसी भी सदस्य को पत्रिका प्राप्त न होने की स्थिति में अपने पोस्ट मैन से एक सप्ताह के समय में जानकारी करें और फिर भी न मिलने की स्थिति में अपने सम्बन्धित पोस्ट ऑफिस में इस विषय में लिखित एक प्रार्थना-पत्र पोस्ट मास्टर साहब को दें जिससे कि पत्रिका न मिलने की खोज-बीन डाक विभाग द्वारा कराके आपकी पत्रिका आपको समय पर मिलनी प्रारम्भ हो जाए। कृपया प्रार्थना-पत्र की एक प्रति पर डाक विभाग द्वारा प्राप्ति के हस्ताक्षर व मोहर लगवाकर हमें भी भेज देवें जिससे कि इस विषय में यहाँ भी डाक विभाग को अवगत करा दिया जाए।

–वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

॥ ओ३म् ॥

महर्षि सोमकेतु कौटल्य और राजा सगर का दान पर सम्वाद

महर्षि कौटल्य महाराज और उनके जो महापिता पवनकेतु कौटल्य थे वह अपने आश्रम में अध्ययन कर रहे थे और इस अध्ययन में लगे हुए थे कि चन्द्रमा की किरणें, चन्द्रमा की कान्ति जब सूर्य की किरणों में मिलान करती है तो उसका कैसा स्वरूप होता है। इस सम्बन्ध में जब वह विचार-विनिमय कर रहे थे तो राजा के यहाँ से एक गऊ उनके द्वारा ऋषि के यहाँ पहुँची। तो सोमकेतु कौटल्य ऋषि महाराज ने कहा प्रभु! हम इस गऊ को स्वीकार नहीं करते। सेवकों ने कहा प्रभु क्यों नहीं करते? उन्होंने कहा यह गऊ मैं स्वीकार नहीं करूँगा। वह सेवक राजा के समीप पहुँचे और राजा से कहा ऋषिवर! गऊओं को स्वीकार नहीं कर रहे हैं, उन्होंने कहा बहुत प्रिय चलो हम गमन करें। राजा सगर ने अपने पुत्र सुखमञ्जस और मन्त्री सहित वहाँ से गमन किया और वह ऋषि के द्वार पर पहुँचे। बारी-बारी से उन्होंने ऋषि के चरणों को स्पर्श किया और कहा प्रभु कुशल हो। उन्होंने कहा हम सर्वत्रता में कुशलवत् हैं। जब उनको यह उत्तर मिला तो विचार सँहिता में जब कामधेनु ऋषि को प्रदान करने लगे तो महात्मा सोमकेतु कौटल्य ने कहा राजन्! मैं इस गऊ को स्वीकार नहीं करता। उन्होंने कहा प्रभु क्यों नहीं करोगे? उन्होंने कहा राजन्! तुम्हें यह गऊ देने का अधिकार ही नहीं है। दर्शन की भाषा में जब तुम पहुँचोगे, तो दर्शनों की भाषा में तुम्हें यह अधिकार नहीं है कि तुम गऊ प्रदान करो। उन्होंने कहा प्रभु! क्यों नहीं है? उन्होंने कहा हे राजन्! जब तुम स्वयँ कला कौशल करते हो, अन्न को उद्गमता से प्राप्त करते हो तो तुम यह गऊ किसके द्रव्य से प्रदान कर रहे हो। राजा ने कहा प्रभु राष्ट्र का जब नियम बना तो द्रव्य के विभाग भी बन गए थे और द्रव्य के विभाग में एक भाग ऋषि-मुनियों का है

तो कोई भी राष्ट्र में मानव दीनता को प्राप्त न हो। मुनिवरो! ऋषि ने जब राजा से यह प्रश्न किया कि दीन कौन होता है? राजा ने कहा कि दीन वह होता है जो किसी के आश्रित रहता है। ऋषि ने कहा तो हम किसी के आश्रित नहीं। हम उसके आश्रित रहते हैं मानो जो संसार का नियन्ता, निर्माण करने वाला है। उसमें भी कुछ वार्त्ताओं में हम उसकी पाप वृत्तियों में रत्त रहते हैं। उन्होंने वर्णन करते हुए कहा कि जैसे हम कर्म करने में स्वतंत्र है, कर्मों का फल भोगने वाला, मानो उसको दण्ड देने वाला कोई और है। दण्ड देने के नाते देखो हम उसको स्वीकार करते हैं और उसे स्वीकार करने के पश्चात् हमारी मनोनीतता पवित्र बन जाती है। ऋषि ने कहा हे राजन्! **वही तो दीन होते हैं जो परमात्मा से विमुख हो जाते हैं, जो परमपिता परमात्मा को नहीं जानते।** तो राजन् हम दीन नहीं हैं, हम तो सदैव अपनी आभा में गमन करते रहते हैं। देखो, यह वायु अपने कक्ष में भ्रमण करती रहती है, अग्नि के परमाणु अपनी आभा में रत्त होते रहते हैं। तो राजन् हम 'अन्नम् ब्रह्मा' इस अन्न को ग्रहण नहीं करेंगे क्योंकि जो कला कौशल करते हो, उसके बदले में जो द्रव्य आता है, उस द्रव्य की तो गऊएँ नहीं हैं। इसीलिए राजन्! गऊ देने का तुम्हें अधिकार नहीं है।

बेटा! राजा सगर के मस्तिष्क में एक नवीन क्रान्ति जागरूक हो गई। एक नवीनता में उन्होंने कहा ऋषिवर! वाक्य, तो आपका यथार्थ है परन्तु मैं इसे समर्पित इसलिए करना चाहता था कि राष्ट्र का जो द्रव्य है उसका उपयोग सत से गुथा हुआ होना चाहिए। ऋषि ने कहा हे राजन्! **राष्ट्र के राज का जो अन्न होता है** वह वेद कहता है **'त्रिवर्धम्, त्रिवर्ताम्, ब्रह्माण्म् त्रिवर्धा'**। त्रिवर्धा तीनों ही सब में व्याप्त हैं। इसलिए राष्ट्र का जो कोष होता है, उसमें मानो रजोगुण, तमोगुण व्याप्त होता है। सतोगुण ध्याना भी होता है परन्तु तीनों व्याप्त रहते हैं। जब तीनों गुण धारण होते रहते हैं तो हे राजन्! मैं इस अन्न को इसलिए ग्रहण नहीं करूँगा। क्योंकि राष्ट्र के अन्न को ग्रहण करने वाला जो जिज्ञासु है, जो यथार्थी है जो प्रभु की पूजा

करने वाला मानव है देखो वह प्रभु की पूजा में रत्त रहता है, उसकी प्रवृत्तियाँ नष्ट हो करके वह प्रभु से विमुख हो जाता है। इसलिए देखो राजा को भी उस राष्ट्र कोष के अन्न को ग्रहण नहीं करना चाहिए। बेटा! जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो राजा सगर के विचारों में यह वाक्य आया और उन्होंने पुनः से यह प्रार्थना की प्रभु! मुझे इसका और स्पष्टीकरण कराएँ। उन्होंने कहा हे राजन्। जिस समय राजा के राष्ट्र में अज्ञान, अन्धकार आता है, राजा के मस्तिष्क में भी तो उस काल में आता है। उस राजा के समाज में एक तथ्य होता है ब्रह्मवेत्ताओं का, एक तथ्य होता है महापुरुषों का। एक ऋषि मुनि है, जब वह विवेकी पुरुष स्वयँ पुरुषार्थ न करके राष्ट्रीय अन्न को ग्रहण करते हैं उस अन्न को जो जिज्ञासु ग्रहण करने लगता है तो राजा के राष्ट्र से जिज्ञासा भ्रष्ट हो जाती है और जब जिज्ञासु नष्ट हो जाते हैं, तीव्र इच्छा वाले तपस्वी चले जाते हैं, तो राजा के राष्ट्र में विवेक नहीं रहता है। और जिस राष्ट्र में, गृह में विवेक नहीं होता तो वह राष्ट्र एक समय रक्त भरी क्रान्ति के मुखाबिन्द में चला जाता है। ऋषि के इन अमृतमयी वचनों का पान कर राजा सगर बड़े आश्चर्य चकित हुए। उन्होंने कहा प्रभु। यह तो वाक्य यथार्थ है क्योंकि हमारे पिता, महापिता भी यही वर्णन करते चले आए हैं कि राष्ट्र के अन्न को ग्रहण न करो इससे बुद्धि भ्रष्ट हो आती है। राष्ट्र में स्वार्थवाद आ जाता है।

–पूज्यपाद-गुरुदेव

सूचना

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज द्वारा संस्थापित वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी) दिल्ली को दानदाताओं द्वारा दान देने पर आयकर विभाग की धारा 80-जी के अन्तर्गत छूट की सुविधा है।

–वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. ऋषियों की वार्त्ताओं को मानना हमारा कर्त्तव्य है, उनकी वात्ताओं को अपने अन्तःकरण में स्थापित कर लेना हमारा कर्त्तव्य है।
2. प्राणधारी वही है संसार में जो अपने प्राणों की रक्षा करके दूसरों की रक्षा करे।
3. भोगों की पूर्ति उस काल में होगी जब हमारे द्वारा दृढ़ता होगी, सँकल्प होगा।
4. वेद के एक मन्त्र को जानने वाला भी यथार्थ आर्य बन सकता है।
5. जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है परन्तु भोगने में परतन्त्र है।
6. मन से शक्तिशाली संसार में प्राण है और कोई वस्तु नहीं है।
7. ज्ञान और प्रयत्न, जिसको प्रयत्न कहते हैं उसका माध्यम प्राण माना गया है और जिसको ज्ञान कहते हैं उसका माध्यम मन माना गया है।
8. जब मानव अंहिसा परमोधर्म का पालन करता है तो पवित्र होता चला जाता है।
9. अंहिसा परमोधर्म आत्मिक बल को कहते हैं।
10. हमारे वेद के आचार्यों ने सबसे प्रथम त्याग भावनाओं को माना है।
11. मानव संसार में आता है व अपने अन्तःकरण को पवित्र बनाने के लिए आता है।
12. आर्यों का आहार व व्यवहार कितना पवित्र होता है, जिसमें दूसरों की निन्दा न हो, जो दूसरों का अपमान न करने वाले हो, गम्भीरतापूर्वक यथार्थ का पालन करने वाले और यथार्थ का उपदेश देने वाले हों, उनको हम आर्य कहा करते हैं।
13. परम आनन्द जब मानव को प्राप्त हो जाता है तो मानव को एक महान् प्रतिभा जाग्रत हो जाती है वही प्रतिभा मानव के जीवन को उज्ज्वल क्या परम आनन्द को प्राप्त करा देती है।
14. जो आर्यों के विपरीत चलने वाले होते हैं उन्हें यवन कहते हैं, जिनको दैत्य भी कहते हैं।

॥ ओ३म् ॥

विनम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (पूर्व जन्म के शृङ्गी ऋषि) की तपोस्थली लाक्षागृह बरनावा की पावन भूमि पर उनके द्वारा स्थापित आश्रम, गुरुकुल व गौशाला संचालित हो रहे हैं। आश्रम पर प्रति वर्ष रक्षा बन्धन, गुरुदेव के जन्मोत्सव पर सामवेद ब्रह्म पारायण महायज्ञ एवम् फाल्गुन मास में पाँच यज्ञशालाओं पर चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायज्ञ का आयोजन किया जाता है तथा गुरुकुल में 100 के लगभग ब्रह्मचारी छठी से बारहवीं तक निःशुल्क शिक्षा ग्रहण करते हैं एवम् गौशाला में भी 40 के लगभग गौवंश हैं। इन कार्यों के लिए 6 अध्यापक व पाँच कर्मचारी भी संस्था की ओर से कार्यरत हैं। गुरुजी के समय से ही ये सब आयोजन आप सब दानियों के सात्त्विक दान से सम्पन्न हो रहे हैं। कोरोना महामारी मे लॉक डाउन के समय भी 2-3 अगस्त (रक्षा बन्धन) एवं 4-5 सितम्बर (गुरुदेव का जन्मदिन) को भी विधि-विधान से सामवेद ब्रह्म पारायण महायज्ञ का आयोजन हुआ है। लेकिन प्रशासन की अनुमति न मिलने के कारण श्रद्धालु, यज्ञ-प्रेमी, दानदाता उक्त यज्ञों में न तो भाग ले सके और न ही अपना सहयोग प्रदान कर सके। उक्त कारण वर्तमान समय में आश्रम संचालन में आर्थिक समस्या का सामना करना पड़ रहा है। इस कारण आप सभी श्रद्धालु यज्ञ-प्रेमियों से विनम्र-निवेदन है कि अपनी श्रद्धा व सामर्थ्य के अनुसार संस्था के निम्न खाता संख्या में अपना सहयोग प्रदान कर सकते हैं।

श्री गाँधी धाम समिति लाक्षागृह बरनावा (बागपत)

बैंक का नाम : स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया बरनावा (बागपत)

खाता संख्या : 11650180365 **IFC कोड :** SBIN0006602

—: निवेदक :—

यशोधर्मा सोलङ्की	**राजपाल त्यागी**	**ठा. वीर सिंह**
प्रधान	मन्त्री	कोषाध्यक्ष
विनोद शास्त्री	**गुरुवचन शास्त्री**	**अरविन्द शास्त्री**
प्रधानाचार्य	सहायक अध्यापक	सहायक अध्यापक

एवम् समस्त गुरुकुल परिवार

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

*1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	110.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	110.00
*3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	120.00
*4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	120.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	60.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	100.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	40.00
8.	आत्म-लोक	45.00
*9.	धर्म का मर्म	50.00
10.	शंका-निवारण	40.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व	50.00
12.	आत्मा व योग-साधना	40.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	150.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	150.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	140.00
17.	रामायण के रहस्य	45.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	50.00
19.	महाभारत के रहस्य	35.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	45.00
21.	रावण-इतिहास	65.00
22.	महाराजा-रघु का याग	35.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	40.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	40.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	45.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	40.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	45.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	50.00
29.	याग-मन्जूषा	45.00
30.	आत्म-दर्शन	35.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	40.00
32.	याग और तपस्या	70.00
33.	यागमयी-साधना	45.00
34.	यागमयी-सृष्टि	40.00
35.	याग-चयन	50.00
36.	दिव्य-रामकथा	150.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	50.00
38.	दिव्य-ज्ञान	45.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	140.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	45.00
41.	आत्म-उत्थान	45.00
*42.	तप का महत्त्व	50.00
43.	अध्यात्मवाद	45.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	45.00
45.	वैदिक-प्रभा	40.00
46.	प्रकाश की ओर	40.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	45.00
48.	वैदिक-विज्ञान	40.00
49.	धर्म से जीवन	40.00
50.	आत्मा का भोजन	45.00
51.	साधना	40.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	45.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	45.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	110.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	50.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	110.00
57.	माता मदालसा	60.00
*58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	110.00
*59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	110.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	110.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	110.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	110.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	110.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएँ	60.00
65.	प्रभु-दर्शन	60.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	110.00
*67.	समाज उत्थान का मार्ग	60.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	110.00
*69.	ब्रह्म की ओर	60.00
*70.	ईश्वर मिलन	60.00
*71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	110.00
*72.	यौगिक प्रवचन माला भाग-16	110.00
*73.	नैतिक शिक्षा	60.00
*74.	यौगिक प्रवचन माला भाग-17	110.00
*75.	आत्मिक ज्ञान	60.00
*76.	यौगिक प्रवचन माला भाग-18	120.00
*77.	यज्ञ विज्ञान	100.00
*78.	यौगिक प्रवचन माला भाग-19	120.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम् कर्मभूमि लाक्षागृह	10.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध है–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं 09719622950
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, डी-33 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, सुपुत्र श्री सुशील त्यागी डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4202763
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री शमीक त्यागी, 16ए, आलोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड़, (उ.प्र.)।
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. श्री पवन त्यागी सुपुत्र श्री राजाराम त्यागी, मौ. खड़खड़ियान, माता, ग्राम खरखौदा, जिला मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 7536097171
13. श्री प्रदीप त्यागी सुपुत्र श्री महेश त्यागी, रघुनिवास 138 सर्वोदय कालोनी, मेरठ रोड़, हापुड़ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9758330473
14. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे. पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
15. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
17. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

मासिक सहयोग

सु. कुमारी नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-III नई दिल्ली– स्मृति–श्रीमति शान्ति अबरोल व श्री देवराज अबरोल	1001 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री ज्ञानेश द्विवेदी	1000 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	501 रुपये
श्री कर्ण तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	501 रुपये
श्रीमती रुचिका तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	501 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री संजय उर्फ टीटू त्यागी सुपुत्र श्री ओमदत्त त्यागी, तलहटा	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री अरुण तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	251 रुपये
श्रीमती सुखमणी तुली, के-3 लाजपत नगर-III, नई दिल्ली	251 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल	201 रुपये
मास्टर कवन्धि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज, दिल्ली	101 रुपये
कुमारी अञ्जलि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सात्विक त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज, दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये
कुमारी प्रीक्षा त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये

मासिक सहयोग का आह्वान

सभी श्रद्धालु एवम् उदार दानदाताओं के सहयोग से समिति के प्रकाशन का कार्य निरन्तर ऊर्ध्वा गति को प्राप्त हो रहा है उसी सहयोग की गरिमा को सुदृढ़ रूप से चिरस्थायी बनाए रखने के लिए आपका अनुदान निरन्तर प्राप्त होता रहे ऐसी आप सभी से समिति विनम्र भाव से प्रार्थना करती है और नए मासिक सहयोगियों को भी अपनी आहुति इस जनकल्याण के कार्य में प्रदान करने की अपेक्षा करती है। **वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)**

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

आज पर्ययण समय में वेदों का गान गाते-गाते हमें ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे विधाता हमारे द्वारा कोई अमूल्य वस्तु प्रदान कर रहा हो। इसका क्या अभिप्राय है कि वेदों का गान गाते समय हृदय में आनन्द कहाँ से आ जाता है। वह कौन-सी अमूल्य निधि है जो हमें परमात्मा ने प्रदान की है? आज हम उस विधाता के बहुत बड़े ऋणी हैं जिस प्रकार मुनिवरो! प्रजा राजा की ऋणी होती है, क्यों होती है? कौन-सी प्रजा ऋणी होती है? मुनिवरो! जो प्रजा राजा के बनाए हुए नियमों के आधार से नहीं चलती, उसके आदर्शों का पालन नहीं करती। इसीलिए आज हम परमात्मा के ऋणी बने बैठे हैं। जो मानव परमात्मा के नियम का अच्छी प्रकार पालन नहीं करता, नाना प्रकार की अशुद्धि करता है, परमात्मा की नाना प्रकार की आलोचनाएँ करता है, वह मानव परमात्मा का महाऋणी है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

(दिनांक 9 दिसम्बर 1962)

वर्ष 49 : अंक : 577
फरवरी 2021

मूल्यः
पन्द्रह रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R.No. DL (S)-20/3220/2018-2020
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2018-2020
POSTED AT KRISHNA NAGAR HP.O. N.D. ON 10/11-02-2021
Published on 5th day of the same month